सरस्वती का जयन्ती दिवस - वसन्त पंचमी

देवर्षि कलानाथ शास्त्री

(राष्ट्रपति सम्मानित), प्रधान सम्पादक ''भारती''संस्कृत मासिक
पीठाचार्य, भाषामीमांसा एवं शास्त्रशोध पीठ - विश्वगुरुदीप आश्रम शोध संस्थान, जयपुर
पूर्व अध्यक्ष - राजस्थान संस्कृत अकादमी
आधुनिक संस्कृत पीठ - जगद्गुरु रामानन्दाचार्य राजस्थान संस्कृत विश्वविद्यालय
पूर्व निदेशक - संस्कृत शिक्षा एवं भाषा विभाग, राजस्थान सरकार
सदस्य - संस्कृत आयोग, भारत सरकार

आज बहुमंजिला इमारतों मे बैठ कर केबल टी.वी. कार्यक्रमों के डिस्को नृत्यों की धुन पर थिरकती और अन्तर्राष्ट्रीय सिनेमा के मापदंडों से अपने आप को माप कर आधुनिकता की होड कर नई पीढ़ी को न तो वसन्त की कुछ खबर है, न भारतीय परंपरा के तीज-त्यौहारों की। कभी-कभी तो लगता है, भारतीय उत्सवों के पारंपरिक स्वरूपों को यदि हम भुलाते चले गये, तो हमारी रुचि ऐसे उत्सवों पर होने वाली सरकारी छुट्टी तक ही सीमित न रह जाए। प्रतिवर्ष माघ शुक्ला पंचमी को मनाये जाने वाले वसन्तपंचमी के उत्सव पर यद्यपि राजस्थान जैसे अनेक राज्यों में सरकारी छुट्टी नहीं होती, तथापि अब तक वसन्त पंचमी का त्यौहार प्राचीन परंपरा के परिवारों में महत्वपूर्ण उत्सवों की सूची में गिना जाता है। यह बात अलग है, कि आज हम इसके अनेक आयामों से इतने अपरिचित हो गये हैं कि यदि इसे 'सरस्वती जयन्ती' का समारोह कह कर परिचित कराया जाए तो बहुतों को विश्वास नहीं होगा। इसका एक कारण तो यही है, कि इस उत्सव को जब से 'वसन्त पंचमी' कहा जाने लगा है, तब से इसे ऋतुपर्व या वसन्त का उत्सव मात्र समझा जाने लगा है, जबकि उत्तर भारत में माघ के शुक्ल पक्ष तक इतनी सर्दी पड़ती है, कि वसन्त का सा माहौल वसन्त पंचमी के दिन नहीं दिखलाई देता। तभी तो राजस्थान के अनेक कवियों ने वसन्त पंचमी के नामकरण पर प्रश्नचिह्न लगाते हुए कहा है, कि वसन्त पंचमी से वसन्त बहुत दूर होता है।

जयपुर के प्रसिद्ध संस्कृत कवि भट्ट श्री मथुरानाथ शास्त्री ने अपने काव्य 'जयपुर वैभवम्' में जयपुर के उत्सवों का वर्णन करते हुए वसन्त पंचमी को वसन्त ऋतु से जोड़ने के औचित्य का समाधान इसी प्रकार से किया है, कि यह उत्सव वसन्त का नहीं, अपितु 'वसन्त आने वाला है' इसकी पूर्व सूचना है :-

संप्रति वसन्तसूचनामिव समधिगम्य,
मनसि मनोजमंजुभावः संनिधीयताम् ।
किंचिन् न्यंचयन्तीव हि पंच मीनकेतुशरान्,
सपदि वसन्तपंचमीयं परिचीयताम्।।

इस उत्सव को इस प्रकार ऋतुराज वसन्त की सवारी के लवाजमें के हाथी के रूप में चित्रित कर इसके नामकरण की संगति उन्होंने बिठाई है, किन्तु इसके तीसरे दिन अर्थात् माघ शुक्ल सप्तमी को आने वाला सूर्यसप्तमी का उत्सव जयपुर में जिस धूम-धाम से मनाया जाता था, इसका अधिक सशक्त चित्रण किया है। उन्होंने वसन्त पंचमी का वर्णन एक पद्य में जब कि सूर्यसप्तमी का वर्णन ग्यारह पद्यों में किया है।

वसन्तोत्सव

वसन्त के साथ इस उत्सव का संबन्ध इसलिए हो गया लगता है, कि जिस प्रकार मकर संक्रान्ति को धनु राशि से मकर राशि में सूर्य का संक्रमण होने के कारण शीतप्रधान उत्सव के रूप में मनाया जाता है, उसी प्रकार मकर राशि से कुंभ राशि में सूर्य का संक्रमण शीतकाल की समाप्ति की सूचना देता है और वसन्त के आगमन की पूर्वसूचना। कुंभ संक्रान्ति इस उत्सव के बाद आती है, जयपुर में प्राचीन परिवारों में वसन्तपंचमी का उत्सव मन्दिरों में देवमूर्तियों को पीली पोशाक धारण करा कर वासन्ती पुष्पों का शृंगार कर मनाया जाता था। महिलाएँ पीला (पीले रंग का परिधान) धारण करती थीं। वैसे भी इन दिनों खेतों में पकी सरसों की पीली फसल दूर दूर तक प्रकृति-सुन्दरी को पीले परिधान से अलंकृत कर एक अपूर्व सुषमा की अवतारणा कर देती है। गुलाब पर यौवन आ जाता है। मध्यकालीन सांस्कृतिक परंपरा में इसे 'मदनमहोत्सव' के रूप में मनाया जाता था। संस्कृत के नाटककारों ने वासन्ती पुष्पों के पराग से सुरभित उपवनों में नई कोपलों और सद्यः प्रस्फुटित कुसुमकलिकाओं से शृंगार कर वासन्ती परिधानों से सजी युवतियों द्वारा इस दिन रति और कामदेव की पूजा का वर्णन बड़े चाव से किया है।

इस दिन सद्यः प्रसूत किसलयों और नई कलियों से मालाएँ गूंथ कर गाती हुई किशोरियाँ उद्यानों में विविध क्रीड़ाएँ करती थीं। वात्स्यायन ने 'कामसूत्र' में ऐसे उत्सव को 'सुवसन्तक' नाम दिया है। नागरिक जीवन के उत्सवों में प्रकृति की गोद में पुष्पों और पल्लवों की छाया में मनाये जाने वाले अनेक महोत्सव हमारी प्राचीन परंपरा ने दिये हैं, जिनसे हम पर्यावरण से अपना चिरन्तन और अनवरत साहचर्य निभा सकें। फूल चुनने और मालाएँ गूंथने की प्रतियोगिताओं का भी वर्णन मिलता है, जिन्हें 'पुष्पावचायिका' क्रीडा कहा गया है। आज वसन्त के शुभागमन का स्वागत करने हेतु आयोजित 'रोज शो' और पुष्प प्रतियोगिताएँ निश्चय ही इस प्रकृति-प्रेम-प्रसूत उत्सवपरंपरा की विरासत की प्रतिनिधि हैं। जब से भारत में गुलाब की खेती शुरू हुई, वासना के साथ इस रसभीने गन्ध-सम्राट् का नाम हमारे कवियों ने घनिष्ठ बना दिया।

रीतिकालीन कवियों के मानस को गुलाब की मादक सुगन्ध ने इतना भावविभोर कर दिया था, कि ऋतुराज वसन्त के दरबार के प्रमुख सामन्त पद से सुशोभित कर रीतिकालीन कविता ने उसे बहुत बडा मनसब, सर्वोच्च

सम्मान दे दिया। महाकवि देव ने तो इतना मनोहर रूपक बाँधा है, कि कामदेव एक सम्राट हैं, जिनका शहजादा वसन्त है और गुलाब, जो कि इस शहंशाह का प्रमुख दरबारी है, सवेरे-सवेरे इस शाहजादे को चुटकियाँ बजा कर खिलाता है-

मदन महीप जू को बालक बसन्त,
ताहि प्रातहि खिलावत गुलाब चटकारी दै।

कौन कहता है कि गुलाब भारतीय परंपरा का पुष्प नहीं है? पाटल पुष्प, स्थलकमल आदि अनेक नामों से हम इसे सदियों से पुकारते आ रहे हैं। वसन्तपंचमी के साथ इस पुष्प का सदियों से नाता है, चाहे इससे पूर्व 'दमनक' पुष्प को जिसकी तीव्र और मादक सुगन्ध संस्कृत कवियों का मन मोहती थी, वसन्त का प्रतीक माना जाता रहा हो। आज भी पुष्टिमार्गीय तथा अन्य भक्तिसंप्रदायों के मन्दिरों में 'श्रीपंचमी' और 'मदन महोत्सव' के समारोहों में वासन्ती पुष्पों के शृंगार द्वारा यह उत्सव मनाया जाता है।

सरस्वती का महोत्सव

जैसा कि प्रारंभ में संकेत किया जा चुका है, भारत की प्राचीन परंपरा में माघ शुक्ल पंचमी को श्रीपंचमी कह कर जो मूर्धन्य महत्व दिया गया था, उसका प्रमुख कारण है इसका सरस्वती देवी से संबद्ध होना। यह माना जाता है कि इसी दिन वाग्देवी सरस्वती का प्राकट्य हुआ था। इस दृष्टि से यह 'सरस्वती जयन्ती' हुई। कुछ सदियों से उत्तर भारत में सरस्वती से संबद्ध होने के कारण इस उत्सव का जो महत्व है, वह वसन्त के महत्व के नीचे दब कर गौण भले ही हो गया हो, आज भी शिक्षणसंस्थाओं में, विशेषकर संगीत-शिक्षणालयों में, इस दिन को प्रमुख उत्सव के रूप में मनाया जाता है। वसन्त राग गाया जाता है, विभिन्न प्रतियोगिताएँ होती हैं। उडीसा, बंगाल, मध्यभारत, पूर्वी भारत तथा दक्षिण भारत के अनेक प्रान्तों में इस दिन सरस्वती पूजा प्रत्येक परिवार में की जाती है। पुस्तकें तो हर परिवार में होती ही हैं। पुस्तकों को एक साथ रख कर उन्हीं में सरस्वती का आवाहन किया जाता है, श्वेत पुष्पों से पूजन किया जाता है। इस दिन विद्यालयों में अवकाश रहता है, गुरु अध्यापन कार्य नहीं करता, क्योंकि पुस्तकें सरस्वती के रूप में पूजागृह में रहती है।

अनेक राज्यों मे वसन्तपंचमी का सार्वजनिक अवकाश 'सरस्वती जयन्ती' के उपलक्ष्य में ही रहा करता था। संभवतः कुछ राज्यों में अब भी यह परंपरा चल रही हो। दूसरे शब्दों में लक्ष्मी से संबंधित उत्सव दीपावली का जो महत्व है, वसन्तपंचमी का उसी प्रकार सरस्वती से संबंधित होने के कारण महत्व होना चाहिए। उपभोक्ता संस्कृति के

युग में लक्ष्मी की तुलना में सरस्वती का जो महत्व रह गया है, वही इन दोनों उत्सवों के पारस्परिक अन्तर में तो नहीं प्रतिबिम्बित हो रहा? सरस्वती की छवि जिस प्रकार हंसवाहिनी, श्वेत वस्त्र धारिणी, गौर वर्ण देवी की है, उसी प्रकार उसके हाथों में एक में वीणा और एक में पुस्तक अनिवार्यतः दिखायी जाती है। वीणा संगीत का और पुस्तक साहित्य (विद्या) का प्रतीक है। इसलिए साहित्य और संगीत के साधकों के लिए श्रीपंचमी (सरस्वती पंचमी) शीर्ष महत्व का दिन होता है।

संगीत की शिक्षा के प्रारंभ के लिए ही नहीं, विद्यारंभ संस्कार (अक्षरज्ञान संस्कार) के लिए, यज्ञोपवीत के लिए (जो वेदविद्या के आरंभ का संस्कार होता है), साथ ही विवाह आदि अनेक संस्कारों के लिए इसी कारण वसन्त पंचमी को 'अबूझ मुहूर्त' का महत्व मिला हुआ है। पाटी पूजने का यह सर्वोत्तम मुहूर्त माना जाता रहा है। चाहे कुछ प्रान्तों में सरस्वती पूजन और पाटी पूजन की प्रथा श्रीपंचमी के अतिरिक्त आश्विन शुक्ल के नवरात्रों की सप्तमी से लेकर दशमी (विजय दशमी) तक भी चलने लगी हो, श्रीपंचमी को सरस्वती पूजा की प्रथा किसी न किसी रूप में पूरे देश में सदियों से चली आ रही है। राजस्थान और उत्तर भारत के अन्य प्रान्तों में संगीत संस्थानों में श्रीपंचमी का उत्सव प्रमुखता से मनाया जाना आज भी संगीत की देवी सरस्वती की पूजा की परंपरा का ही प्रतीक है, चाहे हम आज वसन्त पंचमी को वसन्त राग गा कर ऐसे उत्सवों को वसन्त के स्वागत का पर्व समझने लगे हों।

वीणापाणि की आराधना का यह उत्सव 'श्रीपंचमी' संगीत और साहित्य की अधिष्ठात्री वाग्देवी की जयन्ती है अतः शिक्षा जगत् को, कविकलाकारों को और विद्यार्थियों को ही नहीं, लिखने-पढ़ने से जुड़े समस्त भारतीय परिवारों को इसे वर्ष के प्रमुख उत्सवों में मान्यता देनी चाहिए। वसन्त ऋतु में मनाये जाने वाले उत्सवों का, जिन्हें प्राचीन भारत में 'मदन महोत्सव' की संज्ञा दी गयी थीं, वासन्ती पुष्पों के विकास तथा संगीत और नृत्य के ऋतुपर्व के रूप में तो उत्तर भारत में सदियों से मान्यता प्राप्त है ही।